दैनिक भास्कर

Date: 17-12-24

आर्थिक असंतुलन, विकास की गति भी कम करता है

संपादकीय

दुनिया भर के देशों में आर्थिक असंतुलन का अध्ययन करने वाले मशहूर अर्थशास्त्री थॉमस पिकेटी इन दिनों भारत में हैं। उनका कहना है कि भारत में दक्षिण अफ्रीका के बाद गरीब-अमीर के बीच खाई सबसे ज्यादा बढ़ी है। उन्होंने कहा कि शिक्षा, स्वास्थ्य जैसी अहम सेवाओं पर समुचित खर्च के लिए जरूरी धनराशि देश के मात्र 167 अरबपतियों पर केवल दो प्रतिशत 'सुपररिच टैक्स' लगाकर हासिल की जा सकती है। उनके कथन के अगले कुछ ही घंटों में भारत सरकार के मुख्य आर्थिक सलाहकार ने कहा कि ऐसे किसी भी टैक्स से पूंजी का पलायन होगा और निवेश का माहौल खराब होगा। पिकेटी की बातों को पूरी तरह खारिज करने के बजाय सरकार को तमाम पहलुओं पर सोचना होगा। आज भारत में केवल 10% लोग आयकर देते हैं जबकि चीन में 40 साल पहले यह स्थिति थी और आज 70-80% लोग आयकर देते हैं। चीन 50 साल पहले भारत से गरीब था, लेकिन उसका विकास इसलिए तेज रहा क्योंकि उसने आर्थिक असंतुलन को भी कम किया। नीति-निर्धारकों को यह भी सोचना होगा कि वर्ष 2019-20 में केन्द्र सरकार और सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा पूंजीगत निवेश (कैपेक्स) 4.7% था, जो वर्ष 2023-24 में घटकर 3.8% क्यों रह गया ? कैपेक्स से अंतर-संरचना और भावी विकास का मार्ग प्रशस्त होता है । सोचना होगा कि केवल 167 अरबपतियों पर दो प्रतिशत सुपररिच टैक्स से देश में निवेश का माहौल कैसे खराब होगा? सरकार को भी इसके लाभ होंगे। पहला, राजनीतिक लाभ, क्योंकि बड़े वर्ग को बेहतर सुविधाएं मिलेंगी और दूसरा, टैक्स देने की आदत और माहौल बनेगा, तो देश में शीर्ष पर मौजूद 10 प्रतिशत वर्ग भी ज्यादा टैक्स देगा। सोचना होगा कि क्या शिक्षा, स्वास्थ्य और शोध के लिए देश में अपेक्षित धन उपलब्ध है? आज देश में कर राजस्व जीडीपी का मात्र 13 प्रतिशत है।

Date: 17-12-24

नक्सलियों पर दबाव

संपादकीय

छत्तीसगढ़ में नक्सली संगठनों के गढ़ में पहुंचकर केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह ने नक्सलियों से आत्मसमर्पण करने की अपील करते हुए यह जो कहा कि उनके समक्ष इसके अलावा और कोई उपाय नहीं है, वह कहना इसलिए आवश्यक था, क्योंकि नक्सली अब भी मुख्यधारा में लौटने के लिए तैयार नहीं दिख रहे हैं। इन

स्थितियों में यही उचित होगा कि उनके आत्मसमर्पण की राह खुली रखने के साथ ही उन पर निरंतर दबाव बनाए रखा जाए। उनके सामने यह बार-बार स्पष्ट करना होगा कि वे बंदूक के बल पर सत्ता एवं व्यवस्था परिवर्तन का जो सपना देख रहे हैं, वह कभी पूरा होने वाला नहीं है।केंद्रीय गृहमंत्री पिछले कुछ समय से यह दोहरा रहे हैं कि केंद्र सरकार मार्च 2026 तक नक्सलवाद की समस्या को पूरी तरह खत्म कर देगी। इस लक्ष्य को पाने के लिए जहां यह आवश्यक है कि नक्सल प्रभावित राज्यों की सरकारें केंद्र सरकार का पूरा सहयोग करें, वहीं नक्सलियों के प्रभाव वाले इलाकों में विकास एवं जनकल्याण की योजनाएं तेजी से आगे बढ़ाई जाएं।

ऐसा इसलिए किया जाना चाहिए, ताकि नक्सली संगठन और उनके वैचारिक समर्थक कहे जाने वाले तत्व यानी अर्बन नक्सल यह दुष्प्रचार न करने पाएं कि दूरदराज के इलाकों में शासन विकास पर ध्यान नहीं देता। वैसे इस दुष्प्रचार की कलई खुल चुकी है और यह साबित हो चुका है कि नक्सली ही ग्रामीण इलाकों में विकास कार्यों में बाधक बने हुए हैं।

यह किसी से छिपा नहीं कि नक्सली किस तरह अपने इलाकों में सड़कें नहीं बनने देते और स्कूलों एवं अस्पतालों के निर्माण में अड़ंगा लगाते हैं। उनकी इन्हीं हरकतों के चलते इसका पर्दाफाश हो चुका है कि वे निर्धन तबकों के हितों की लड़ाई लड़ रहे हैं। वास्तव में वे इन वर्गों के हितों की रक्षा में सबसे अधिक बाधक बनकर उभरे हैं और इसीलिए उनका प्रभाव कम होता चला जा रहा है। यह उल्लेखनीय है कि पिछले कुछ वर्षों में नक्सल प्रभावित जिलों की संख्या में कमी दर्ज की गई है। 2019 में नक्सली हिंसा से प्रभावित जिलों की संख्या 90 थी। अब यह संख्या 40 से भी कम रह गई है। इस संख्या में और अधिक कमी तब आएगी, जब नक्सलियों को यह महसूस होगा कि उनके छिपने के लिए कोई जगह नहीं रह गई है। शायद तभी वे अपने निरर्थक संघर्ष को विराम देने के लिए तैयार होंगे। जब तक वे ऐसा नहीं करते, तब तक उनके खिलाफ कठोरता का परिचय देने में संकोच नहीं किया जाना चाहिए। इसलिए और भी नहीं, क्योंकि वे जब-तब सुरक्षा बलों को निशाना बनाते रहते हैं। यह सही है कि नक्सलियों की ताकत कम हुई है, लेकिन उनके खिलाफ अभियान इसलिए जारी रहना चाहिए, ताकि वे नए सिरे से खुद को संगठित न कर सकें। नक्सलियों के खिलाफ जारी अभियान के तहत यह अवश्य देखा जाना चाहिए कि उन तक आधुनिक हथियार कैसे पहुंच रहे हैं।

दैनिक जागरण

Date: 17-12-24

सिर उठाता परिसीमन का प्रश्न

डॉ. एके वर्मा, (लेखक राजनीतिक विश्लेषक एवं सेंटर फार द स्टडी आफ सोसायटी एंड पालिटिक्स के निदेशक हैं)

देश में चुनावों पर चर्चा होती है, लेकिन चुनाव इकाइयों अर्थात निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन पर चर्चा नहीं होती। प्रत्येक जनगणना के बाद परिसीमन कराने का प्रविधान है। संविधान (अनु.327) संसद को परिसीमन का अधिकार देता है, जिसमें दो बड़े मुद्दे हैं-प्रथम, लोकसभा और विधानसभाओं में कितने-कितने जनप्रतिनिधि होने चाहिए? दूसरा, लोकसभा

और विधानसभा निर्वाचन क्षेत्रों की सीमाओं, उनके आकार-प्रकार में क्या कोई बदलाव जरूरी है? संविधान संसद को अधिकार देता है कि वह उपरोक्त दोनों मुद्दों के समाधान हेतु अभिकरण बनाए और परिसीमन प्रक्रिया निर्धारित करे। प्रथम लोकसभा और विधानसभा चुनावों हेतु परिसीमन राष्ट्रपति कार्यालय ने किया। संसद ने 1952 में प्रथम परिसीमन आयोग का गठन किया, जिसने 1957 के चुनावों हेतु परिसीमन किया। उसके बाद 1962 और 1972 में द्वितीय और तृतीय परिसीमन आयोगों ने 1971 एवं 1972 की जनगणना के आधार पर परिसीमन किया। 1975 में इंदिरा गांधी ने आपातकाल लगाकर 42वें संविधान संशोधन द्वारा अगले 25 वर्ष तक परिसीमन पर रोक लगा दी। फलतः 1981 और 1991 में परिसीमन नहीं हो सका। संसद द्वारा 2002 में चतुर्थ परिसीमन आयोग का गठन हुआ, लेकिन 84वें संविधान संशोधन (2001) द्वारा लोकसभा और विधानसभाओं में सांसदों और विधायकों की संख्या बढ़ाने पर 2026 के बाद होने वाली जनगणना तक इस आधार पर प्रतिबंध लगा दिया गया कि 2026 तक देश में जन्मदर और मृत्युदर बराबर हो जाएगी, लेकिन ऐसा हुआ नहीं। फलतः चतुर्थ परिसीमन आयोग केवल आंशिक परिसीमन कर सका।

1972 के बाद पचास वर्षों से अधिक समय से पूर्ण परिसीमन नहीं हुआ है। आज देश की जनसंख्या चीन से ज्यादा हो गई है, पर सांसदों और विधायकों की संख्या नहीं बढ़ी। इससे सांसद और विधायक अत्यधिक जनसंख्या का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। एक सांसद औसतन 25 लाख और विधायक पांच-सात लाख लोगों का प्रतिनिधित्व कर रहा है, जबकि इंग्लैंड के सांसद एक लाख और अमेरिका के सात लाख लोगों का ही प्रतिनिधित्व करते हैं। अतः आगामी परिसीमन आयोग द्वारा सांसदों और विधायकों की संख्या बढ़ाने का प्रतिवेदन जरूरी है। जनप्रतिनिधियों की संख्या न बढ़ने से दूसरी समस्या यह है कि प्रतिनिधित्व की समानता का सिद्धांत ध्वस्त हो गया है। ज्यादा जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करने वाले सांसद के मत का मूल्य वही है, जो कम जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करने वाले सांसद का। यदि केवल जनसंख्या को परिसीमन और सीटों के आवंटन का आधार बनाया जाएगा, तो वे राज्य दंडित होंगे, जिन्होंने जनसंख्या नियंत्रण में अच्छा काम किया है। आगामी परिसीमन में अनुमानतः कर्नाटक में 8, तेलंगाना और आंध्र में 3-3, तमिलनाडु में 2 सीटें बढ़ेंगी, जबकि केरल में एक लोकसभा सीट घट सकती है। वहीं मध्य प्रदेश में 18, राजस्थान में 19, महाराष्ट्र में 20, बिहार में 30 और उत्तर प्रदेश में 48 सीटें बढ़ सकती हैं। आगामी परिसीमन में जनसंख्या नियंत्रण और 'प्रतिनिधित्व की समानता' में संतुलन चुनौतीपूर्ण होगा। इस पर आश्चर्य नहीं कि दक्षिण के राज्य परिसीमन को लेकर आशंका जताने लगे हैं। गृहमंत्री अमित शाह ने संसद को सूचित किया था कि लोकसभा चुनाव बाद जनगणना और परिसीमन कराया जाएगा।

परिसीमन में लोकसभा की सीटें बढ़ना तय हैं। मोदी सरकार ने दूरदर्शिता से नई संसद का निर्माण कराया, जिसमें 888 लोकसभा सीटें हैं, लेकिन राज्यों ने इस पर अभी ध्यान नहीं दिया है। लोकसभा में करीब डेढ़-दो सौ सीटें बढ़ना तय है। युवाओं को इसका लाभ लेना चाहिए। पीएम मोदी ने युवाओं से राजनीति में आने का आह्वान भी किया है। नारीशक्ति वंदन अधिनियम से महिलाओं हेतु लोकसभा और विधानसभाओं में एक तिहाई सीटें आरक्षित की गई हैं। लोकसभा की वर्तमान सदस्य संख्या पर 181 महिला सीटें आरक्षित होंगी और यदि परिसीमन से न्यूनतम 150 लोकसभा सीटें भी बढ़ती हैं, तो लोकसभा में 231 महिला सीटें आरक्षित होंगी, जिसका लाभ महिलाओं को मिलेगा। अनुसूचित जाति-एससी और अनुसूचित जनजाति-एसटी की आरक्षित सीटों में भी वृद्धि होगी, क्योंकि अनु. 330(2) के अनुसार प्रत्येक राज्य को आवंटित सीटों में एससी और एसटी के लिए उसी अनुपात में सीटें आरक्षित होंगी, जो अनुपात उनका राज्य की आबादी में होगा। जब 2006 में आंशिक परिसीमन हुआ था, तब लोकसभा सीटों के बढ़ने पर तो प्रतिबंध था, पर एससी की आरक्षित सीटें 79 से बढ़कर 84 और एसटी की सीटें 41 से बढ़ कर 47 हो गई थीं। अगले परिसीमन में यह संख्या और बढ़ेगी।

आगामी परिसीमन आयोग को या तो लोकसभा में अधिकतम सीटों की संख्या तय कर उन्हें राज्यों को आवंटित करने का फार्मूला बनाना होगा या यह तय करना होगा कि 2026 में भारत की अनुमानित जनसंख्या एक अरब 42 करोड़ में कोई सांसद अधिकतम कितनी जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करेगा। इसके आधार पर ही लोकसभा सीटों की संख्या निर्धारित होगी। संसद को परिसीमन आयोग अधिनियम 2026 में ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए कि आयोग संवैधानिक प्रविधानों का अनुपालन करते हुए जनसंख्या नियंत्रण में बेहतर प्रदर्शन करने वाले राज्यों को पुरस्कृत कर उनको कुछ अतिरिक्त लोकसभा सीटें आवंटित करे। इसकी अनदेखी नहीं की जानी चाहिए कि परिसीमन में अपने यहां लोकसभा सीटों की संख्या में कटौती की आशंका के कारण दक्षिण के कुछ राज्य जनसंख्या बढ़ाने की अपील कर रहे हैं। पूर्ववर्ती परिसीमन आयोगों ने यह नहीं बताया कि उन्होंने किस फार्मूले के आधार पर परिसीमन किया। आयोग में प्रत्येक राज्य से पांच सांसद और विधायक क्रमशः लोकसभा और विधानसभाओं के स्पीकर द्वारा नामित किए जाते हैं, पर वे भी परिसीमन प्रक्रिया की बारीकियों को नहीं जानते या जानना नहीं चाहते। उन्हें अपना निर्वाचन क्षेत्र बचाने की ही चिंता होती है। अतः अगले परिसीमन आयोग को कार्यप्रणाली में पारदर्शिता लाने के साथ ही विषय विशेषज्ञों को भी परामर्श प्रक्रिया में सम्मिलित करना होगा। इससे परिसीमन में जानबूझकर या अनजाने में होने वाली गलतियों से बचा जा सकता है। परिसीमन में पारदर्शिता और परामर्श इसलिए और जरूरी है, क्योंकि अनु.329 परिसीमन आयोग के निर्णयों में न्यायपालिका हस्तक्षेप की अनुमति नहीं देता।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 17-12-24

हस्तक्षेप की नीति

संपादकीय

सरकार ने हाल के वर्षों में कहा है कि भारत व्यापार और आर्थिक एकीकरण को लेकर समझदारी भरा रुख अपना रहा है। उसने मौजूदा मुक्त व्यापार समझौतों का बेहतर इस्तेमाल करने का प्रयास किया है और ऐसे नए समझौतों की संभावना तलाश कर रहा है। आंशिक तौर पर ऐसा इसलिए हुआ कि उसने यह बात समझ ली है कि विनिर्माण को बढ़ावा देने के लिए भारत को वैश्विक मूल्य श्रृंखला का हिस्सा बनना होगा। परंतु इसके साथ ही उसने एक नई लाइसेंस परमिट व्यवस्था भी पेश की जिससे विभिन्न क्षेत्रों के कारोबारियों को निपटना होगा। गुणवत्ता नियंत्रण ऑर्डर (क्यूसीओ) की तादाद बढ़ी है। ये कुछ खास प्रमाणन के बिना आयात को प्रतिबंधित करते हैं। खासतौर पर भारतीय मानक ब्यूरो के प्रमाणन के बिना। इस बारे में सरकार का दावा यह है कि भारतीय उपभोक्ताओं को खराब गुणवत्ता वाली वस्तुओं से बचाने की आवश्यकता है। परंतु ऐसा भी हो सकता है कि इसका इस्तेमाल भारत की आपूर्ति श्रृंखला में चीनी उत्पादों की मौजूदगी को नियंत्रित करने के लिए किया जाए। परंतु तथ्य यह है कि नए गैर टैरिफ अवरोध खड़े किए गए हैं जो उपभोक्ता हितों के खिलाफ हैं और कारोबारियों तथा विनिर्माताओं दोनों को परेशानी में डालते हैं।

स्टील का उदाहरण लेते हैं। उद्योग जगत स्वाभाविक रूप से चीन की अतिरिक्त क्षमता को लेकर चिंतित है जो भारत में बने स्टील को गैर प्रतिस्पर्धी बना सकता है परंतु चीन द्वारा स्टील को डंप किए जाने की समस्या को क्यूसीओ के अतिरिक्त इस्तेमाल से ही खत्म नहीं किया जा सकता है। कई प्रकार के स्टील को लेकर मनमाने ढंग से ऑर्डर जारी किए गए हैं। इस बात ने अन्य विनिर्माण कंपनियों को भी प्रभावित किया है जिन्हें शायद अपनी वस्तुएं निर्मित करने के लिए आयातित या विशेष तरह के स्टील की जरूरत होगी। इसमें निर्यात से जुड़ी वस्तुएं भी शामिल हैं। बीआईएस लाइसेंस हासिल करना महंगी और समय खपाऊ प्रक्रिया है। अगर क्यूसीओ द्वारा नहीं कवर किया जाए तो भी आयातकों से 'अनापत्ति प्रमाण पत्र हासिल करने की उम्मीद तो की जाती है। कई लोग इनसे निपटने के बजाय कम गुणवत्ता वाले इस्पात का इस्तेमाल कर लेंगे। यह बात उन्हें कीमत और गुणवत्ता दोनों ही मामलों में कम प्रतिस्पर्धी बनाएगी। यह विश्वस्तरीय घरेलू विनिर्माण क्षेत्र विकसित करने का तरीका नहीं है।

यह छोटे और मझोले उपक्रमों के लिए भी खास नुकसानदेह है। बड़ी कंपनियां जिनके पास आयात के बड़े ऑर्डर हैं उनके लिए अफसरशाही बाधाओं से निपटना किफायती हो सकता है लेकिन छोटी कंपनियां स्वाभाविक रूप से इसे मुश्किल पाएंगी। ऐसे में उनके लिए यह तुलनात्मक रूप से महंगा होगा और उनकी वस्तुओं की गुणवत्ता खराब होगी। चूंकि सरकार की प्राथमिकता सूक्ष्म, लघु और मझोले उपक्रमों यानी एमएसएमई को बढ़ावा देने और वैश्विक मूल्य श्रृंखला में उनकी हिस्सेदारी सुनिश्चित करना है इसलिए बड़ी तादाद में क्यूसीओ का होना नुकसानदेह साबित हो सकता है। श्रम गहन कारोबार योग्य वस्तुओं मसलन टेक्सटाइल आदि को कच्चे माल में क्यूसीओ के अनचाहे परिणाम बड़े पैमाने पर भुगतने पड़े हैं। अब वे देश में ही इन उत्पादों के उत्पादन पर एकाधिकार कर चुकी कंपनियों की दया पर हैं। बाजार में इस नए तरह के अफसरशाही हस्तक्षेप से देश के उद्योग जगत का संरक्षण नहीं होगा क्योंकि बिना कच्चे माल के वह वैसे भी ठप पड़ जाएगा। बल्कि यह देश में विनिर्माण में निवेश कम करने वाला साबित होगा क्योंकि कम ही लोग ऐसे समय में क्षमता विस्तार करना चाहेंगे जबकि जरूरी कच्चे माल तक पहुंच इतनी मुश्किल हो।

सरकार विनियमन और सुधारों को लेकर अपने प्रदर्शन पर गर्व कर सकती है। हालांकि वह खराब गुणवत्ता वाली चीनी वस्तुओं से निपटने के नाम पर अफसरशाही नियंत्रण लागू करके अपनी ही उपलब्धियों को कम कर रही है। इससे पहले सरकार ने कहा था कि क्यूसीओ में 2,500 वस्तुओं को कवर किया जाएगा। इससे भारत की विदेश नीति ऐसे हालात की ओर लौटेगी जहां भारत की उत्पादकता और गुणवत्ता प्रभावित होगी। उपभोक्ता कल्याण पर भी इसका बुरा असर होगा। सरकार के हस्तक्षेप की इस अवांछनीय प्रवृत्ति पर पुनर्विचार जरूरी है।

जनसत्ता

Date: 17-12-24

विदा उस्ताद

संपादकीय

तबले का कायदा उन्हें घुट्टी में मिला था। पिता अल्लारक्खा कुरैशी मशहूर तबलावादक थे। संगीत के माहौल में ही उनकी परवरिश शुरू हुई थी। मगर जाकिर हुसैन जैसे पैदा ही तालवाद्य के लिए हुए थे। बचपन से ही उनकी अंगुलियां थिरकनी शुरू हो गई थीं। पिता ने उन्हें तबले की तालीम देनी शुरू की। बारह साल की उम्र तक पहुंचते-पहुंचते उन्होंने वह काबिलियत हासिल कर ली थी कि अमेरिका के संगीत समारोह में अपना हुनर दिखा सकें। अमेरिका के पहले कार्यक्रम में ही उन्हें ऐसी शोहरत मिली कि फिर उन्होंने पीछे लौट कर नहीं देखा । जाकिर हुसैन ने उसे वाद्य के रूप में नहीं साधा, बल्कि तबले को उन्होंने जीया था। तबले में जितनी संभावनाएं उन्होंने तलाश कीं, उसकी जितनी बारीकियां उन्होंने उजागर कीं, उनसे पहले किसी तबला नवाज ने नहीं किया था। हर तरह के तालवाद्य और तारवाद्य के साथ उन्होंने जुगलबंदी की, देश और दुनिया के हर नामचीन गायक और वादक के साथ उन्होंने संगत की अपनी पहले की पीढ़ी के भी, अपने समय और अपने बाद की पीढ़ी के भी । तबले को उन्होंने पश्चिमी देशों में भी प्रतिष्ठा दिलाई।

जाकिर हुसैन न केवल अद्भुत तबलावादक थे, बल्कि उनका बजाने का अंदाज भी अनोखा था। तबला बजाते हुए उनके लंबे बाल जिस अंदाज में लहराते, लगता कि उनके बाल और ताल जुगलबंदी कर रहे हों। उनका वह अंदाज सभी को मोहता था। वे पहले वादक थे, जिन्होंने तबले से अन्य वाद्य यंत्रों की ध्वनियां भी निकालने का प्रयोग किया, जैसे उनका तबले से शिव के डमरु का नाद बहुत लोकप्रिय हुआ था। वे मंचीय प्रदर्शनों में तबले से धुनें निकाल कर भी कौतुक रच दिया करते थे। भारतीय शास्त्रीय संगीत के अलावा उन्होंने अमेरिकी जैज में भी अपने तबले से नया रंग भर दिया। इसका नतीजा था कि इसी साल अप्रैल में उन्हें एक साथ तीन ग्रेमी अवार्ड प्राप्त हुए। इससे पहले उन्हें दो ग्रेमी मिल चुके थे। ग्रेमी अवार्ड संगीत की दुनिया का सबसे बड़ा सम्मान माना जाता है। उन्होंने कई फिल्मों में अभिनय भी किया था, कई विज्ञापन उनके अभिनय से यादगार हो गए। भारत सरकार उन्हें तीनों पद्म सम्मानों से सम्मानित कर चुकी थी। उनका जाना निस्संदेह ताल की दुनिया को कुछ सूना कर गया है।

राष्ट्रीय सहारा

Date: 17-12-24

हिंसा तो छोड़नी होगी

संपादकीय

केंद्र 'सरकार नक्सलियों के खात्मे के लिए प्रतिबद्ध है, इस बात के लिए सरकार की सराहना तो करनी ही चाहिए। केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह का यह कथन बेहद महत्त्वपूर्ण माना जाना चाहिए कि नक्सलियों को अगर शांति के साथ जीवन बिताना है तो उन्हें हथियार छोड़ मुख्यधारा में लौटना होगा। जब से केंद्र में नरेन्द्र मोदी की सरकार सत्तासीन हुई है, तभी से नक्सलियों के समूल नाश के लिए सरकार की प्रतिबद्धता परिलक्षित हुई है। पिछली कई मुठभेड़ में नक्सलियों को भारी चोट पहुंची है और उन्हें एक सीमित इलाके में रहने को मजबूर किया गया है। यह इस बात का द्योतक है कि सरकार ने नक्सलियों पर पूरी तरह से लगाम कसने का मन बना लिया है। आंकड़ों की बात करें तो एक वर्ष में 287 नक्सलियों को सुरक्षा बलों ने मुठभेड़ में ढेर कर दिया तो 837 नक्सलियों ने आत्मसमर्पण कर दिया। यह इस बात का

प्रमाण है कि सरकार अब देश के दुश्मनों को बख्शने के मूड में नहीं है। वैसे भी नक्सली होने की आड़ में इन्होंने जितना नुकसान समाज और देश का पहुंचाया है, उतना किसी और संगठन ने नहीं पहुंचाया है। बहरहाल, सरकार की मंशा नक्सलियों को बढ़ने देने की नहीं दिखती है। चार दशक में पहली बार ऐसा हुआ है कि नक्सली हिंसा में मारे गए आम नागरिकों और सुरक्षा बलों की संख्या 100 से कम रही है। पिछले दस वर्षों में तुलनात्मक रूप से माओवादी हिंसा में बलिदान होने वाले सुरक्षाकर्मियों की संख्या में 73 प्रतिशत और नागरिकों की मृत्यु में 70 प्रतिशत की उल्लेखनीय कमी दर्ज की गई है। दरअसल, केंद्र में मौजूद मोदी सरकार ने माओवादियों की आड़ में समाज में हिंसा फैलाने और देश में विकास कार्यों को नुकसान पहुंचाने की साजिश को वक्त रहते समझ लिया और इसके खात्मे की प्रतिबद्धता दिखाई। हालांकि नक्सलियों की गांव-देहात तक में पहुंच और कथित तौर पर बनाई गई रॉबिनहुड की छवि से सरकार और सुरक्षा एजेंसियों को भारी दुश्वारियों का सामना करना पड़ा, मगर अंततः दूरदराज के भोले-भाले लोगों को यह बात समझ में आ गई कि उनकी प्रगति में सबसे बड़ी बाधा ये नक्सली हैं। लिहाजा, सरकार को भी नक्सलियों के खिलाफ एक्शन लेने में आसानी हुई। बहरहाल, मोदी सरकार ने जिस तरह नक्सलियों को समाज की मुख्यधारा में आने का न्योता दिया है, उससे उम्मीद की जानी चाहिए कि हालात बदलेंगे।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 17-12-24

नशे के खिलाफ

संपादकीय

सर्वोच्च न्यायालय ने भारतीय युवाओं के बीच नशीले पदार्थों के सेवन को लेकर न केवल चिंता जाहिर की है, बल्कि मादक द्रव्यों के सेवन को सामान्य मानने-बताने की बढ़ती प्रवृत्ति पर भी अफसोस जताया है। नशा करना कहीं से भी सामान्य या सरल बात नहीं है, पर आज दुनिया में नशा करना धीरे-धीरे न्यू नॉर्मल होता जा रहा है। न्यायमूर्ति बी नागरत्ना और न्यायमूर्ति एन कोटिश्वर सिंह की पीठ ने मादक पदार्थों की तस्करी के नेटवर्क में शामिल होने के एक आरोपी के खिलाफ एनआईए की जांच की पुष्टि करते हुए यह कहा है। यह आरोपी पाकिस्तान से भारत नशीले पदार्थों की समुद्री मार्ग से तस्करी करता था। दरअसल, देश में एक वर्ग ऐसा है, जो मादक द्रव्यों को सामान्य रूप से स्वीकार करता है। ऐसा व्यवसायी वर्ग भी है, जो मादक द्रव्यों की तस्करी में जुटा हुआ है और यह वर्ग सही-गलत के विचार से खुद को ऊपर मानता है। ऐसे में, यह बहुत जरूरी है कि नशे के कारोबार और नशा करने वाले तमाम लोगों को सही आईना दिखाया जाए। सर्वोच्च न्यायालय ने यही जरूरी काम किया है।

हम सामाजिक विकास के मोर्चे पर ऐसे संक्रमण काल से गुजर रहे हैं, जब नशाखोरी के खिलाफ किसी भी सलाह को घिसी-पिटी मानने वाले बहुत हो गए हैं। मादक पदार्थों के सेवन पर तो वैसे भी प्रतिबंध है, लेकिन जिन राज्यों में शराबबंदी भी है, वहां भी नशे के खिलाफ किसी सलाह को बीती बात मानने वाले बहुत हैं। ऐसे में, न्यायमूर्ति नागरत्ना का यह कहना बहुत महत्वपूर्ण है कि इससे देश के युवाओं की चमक खत्म होने का खतरा है। नशा न केवल सामाजिक,

आर्थिक, बल्कि मानसिक रूप से भी कमजोर करता है। सबसे अच्छी बात है कि अदालत ने माता-पिता, समाज और सरकारी संगठनों से तत्काल व सामूहिक कार्रवाई का आह्वान किया है। मादक पदार्थों के खिलाफ हमारी लड़ाई तब तक सफल नहीं हो सकती, जब तक कि तमाम जिम्मेदार लोग सजग न हो जाएं। हर धर्म, हर जाति, हर उम्र के लोग नशा करने लगे हैं, तो इसका मतलब यह नहीं कि नशे को सही |मान लिया जाए। नशीली चीजों का व्यापार समाज को अस्थिर करते हुए हिंसा व आतंक को भी वित्त पोषित करता है। अपराधियों के लिए धन कमाने का आसान मार्ग बन जाता है। मादक पदार्थों की तस्करी- | बिक्री से भारी धन कमाने वाले अपराधी अपने बचाव के लिए भी इसी धन का इस्तेमाल करते हैं।

यह तो कहना ही चाहिए कि मादक पदार्थों के क्रय-विक्रय के लिए बहुत हद तक भ्रष्टाचार ही जिम्मेदार है। अगर भ्रष्टाचार न हो, तो अपराधियों को पकड़ने और दंडित करने में आसानी हो सकती है। अतः सबसे ज्यादा जरूरी यह है कि अदालतें भी मादक पदार्थों के दुष्ट व समाजद्रोही कारोबारियों पर कड़ाई से अंकुश लगाएं। क्या यह सच नहीं है कि मादक पदार्थों की तस्करी और कारोबार में लगे लोगों को भी | कई बार जमानत मिल जाती है? वह अपराधी जेल से बाहर आकर | फिर उसी काले धंधे में जुट जाता है। अगर वाकई हम नशे के खिलाफ आंदोलन चलाना चाहते हैं, तो सभी को इसमें योगदान देना होगा और सबसे पहले नशे को 'कूल' या 'न्यू नॉर्मल' मानने की प्रवृत्ति से बाज आना होगा। बहरहाल, न्यायमूर्ति नागरत्ना की विशेष रूप से प्रशंसा करनी चाहिए। उन्होंने समझाया है कि किशोरों की सबसे महत्वपूर्ण चाह माता-पिता का स्नेह है। यथोचित स्नेह से ही मादक द्रव्यों के गलत सेवन की चाह का सही इलाज संभव है।